SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

गाँधी की दृष्टि में नारी अवधारणाः एक विमर्श

शिप्रा, Ph.D., इतिहास
उ.म.वि., इब्राहिमपुर, मसौढ़ी, पटना, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
शिप्रा, Ph.D.

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 10/07/2023
Revised on : -----
Accepted on : 17/07/2023
Plagiarism : 00% on 10/07/2023

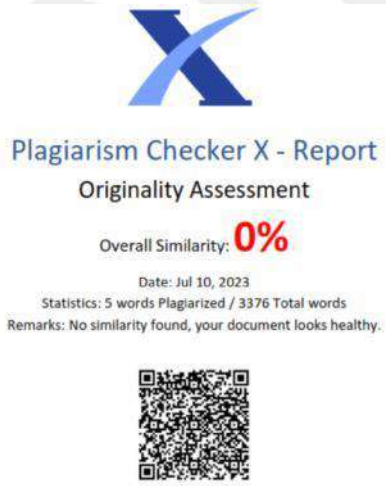

शोध सार

गाँधी एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसकी नींव न्याय, समानता व शांति पर आधारित हो। इस महती उद्देश्य की प्राप्ति हेतु यह परमावश्यक था कि समाज के दो आधारभूत अंगो–पुरूष व स्त्री के बीच समानता के सभी तत्त्व सुनिश्चित व सुनिर्धारित हों। देश के समन्वित व शांतिपूर्ण विकास के लिए यह लैंगिक समानता पूर्व निर्धारित शर्त है। गाँधी ने उत्कृष्ट शब्दों में नारी को गौरवान्वित करते हुए कहा, "नारी ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति है, वह अहिंसा की अवतार है तथा अपने धार्मिक आग्रहों के परिप्रेक्ष्य में वह पुरूष जाति में कोसों आगे है।

मुख्य शब्द

अवधारणा, नारीवादी, गाँधीवाद, स्वदेशी, पर्दा–प्रथा, सशक्तिकरण.

भूमिका

अब यह प्रश्न उठता है कि नारी के संबंध में गाँधी की समन्वित सोच व सम्मानपूर्ण भाव का आधार क्या था, अर्थात इस पवित्र भाव पल्लवन, पुष्पन व विकास उनमें कब व किन परिस्थितियों में हुआ था। इस प्रश्न का समाधान के लिए हमें गाँधी के व्यक्तित्व निर्माण के उन प्रारंभिक अवस्थाओं को खंगालना होगा जिनमें विभिन्न स्त्रियों ने विभिन्न रूपों में उनके जीवन व दर्शन को निर्णायक रूप से प्रभावित किया। जिन स्त्रियों ने उन पर गहरी छाप छोड़ी, उनमें उनकी माँ व बहन का पहला महत्वपूर्ण स्थान है। गाँधी ने अपने रचनाओं व उद्धरणों में अपनी माँ का सर्वाधिक जिक्र किया है। सत्याग्रह का पहला अध्याय उन्होंने अपनी माँ से सीखा। विवाहोपरान्त कस्तूरबा उनके जीवन में आई, जिन्होंने उनके भावी व्यक्तित्व को गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी तरह आश्रमवासी स्त्रियों में मीराबेन व अमृत कौर की

सजगता व प्रतिबद्धता से वे प्रभावित हुए।

बारबरा साउथर्ड के अनुसार गाँधी की नारीवादी सोच में दो तत्वों की सर्वाधिक भूमिका है–पहला, हर स्तर पर तथा हर मायने में स्त्री–पुरूष समानता तथा दूसरा, दोनों के विशिष्ट लैंगिक भिन्नता के मद्देनजर उनके सामाजिक दायित्वों में भिन्नता।[1] गाँधी ने एक बार कहा, ''पुरुषों को पारिवारिक देखभाल की जिम्मेदारी निभानी चाहिए तथा स्त्रियों को घरेलू प्रबंधन में अपनी भूमिका तय करनी चाहिए और इस तरह दोनों एक–दूसरे के पूरक की भूमिका अदा करनी चाहिए। गाँधीवाद के लैंगिक संबंधी दर्शन में इस बात को रेखांकित किया गया है कि चूंकि पुरुष व स्त्री की सामाजिक अपेक्षाओं में विशिष्टगत भिन्नता परिलक्षित होती है तो उनकी सार्वजनिक व निजी भूमिकाओं में भी भिन्नता की मौजूदगी एक सहज, स्वाभाविक चीज की उत्पत्ति ब्रह्म से हुई है तो फिर पुरुष व स्त्री के बीच में भिन्नता कहाँ है। उन्होंने इस बात को रेखांकित किया कि लिंग के बजाय वैयक्तिक आत्मा की भूमिका अधिक प्रबल होती है। धर्मग्रंथों पर टिप्पणी करते हुए गांधी ने कहा कि स्मृतियों में लिखी सारी चीजें दैव वाणी नहीं है तथा उनमें भटकाव व त्रुटियों का होना सहज संभाव्य है।[2] यदि धर्म व धर्मशास्त्र अनैतिक चीजों को हामरे सामने परोसते या थोपने की कोशिश करते हैं तो हमें उसे अस्वीकार कर देना चाहिए। गाँधी ने कहा, ''हिन्दुत्व प्रत्येक प्राणी को इस बात के लिए खुली छूट प्रदान करता है कि वह अपने आत्मानुभूति की उपलब्धि के लिए अपना मार्ग खुद तय करें।[3] गाँधी का विचार था कि स्त्रियों के शोचनीय तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों के वजह से हुई हैं अन्यथा दोनों में एक ही आत्मा का वास है और दोनों मूलतः एक है। प्रत्येक की भूमिका एक–दूसरे के पूरक के रूप में होती है लेकिन परिस्थितिजन्य दुर्घटनावश पुरुषों ने हजारों वर्ष पूर्व से ही स्त्रियों पर आधिपत्य करना शुरू कर दिया। परिणामस्वरूप स्त्रियों की मनोदशा हीन भावना से ग्रस्त हो गई और वह उसके (पुरुषों के) श्रेष्ठता को ही सत्य मानने लगी तथा अपने आपको उसके रहमोकरम पर छोड़ दिया। लेकिन ऋषियों व संतों ने स्त्रियों की भूमिका को पहचाना।[4] पुरुष व स्त्री की मानसिक बनावट में मूलतः भेद नहीं है इसलिए दोनों आजादी, समानता व स्वंत्रता की समान हकदार हैं।

1921 में यंग इंडिया में गांधी ने लिखा, ''पुरुषों द्वारा स्वनिर्मित सम्पूर्ण बुराइयों में सबसे घृणित वीभत्स व विकृत बुराई है उसके द्वारा मानवता के आधे (बेहतर) हिस्से (जो कि मेरे लिए स्त्री जाति है न कि कमजोर व पिछड़ी जाति) को उसके न्यायसंगत अधिकार है से वंचित करना।'' महिलाओं के प्रति असमानता व अन्याय को बोध करते हुए गांधी ने इस बात को दृढ़ता से कहा, ''यदि मैं स्त्री के रूप में पैदा होता तो मैं पुरुषों द्वारा थोपे गए किसी भी अन्याय का जमकर विरोध करता तथा उनके खिलाफ विद्रोह का झंडा बुलंद करता।[5]

जहाँ तक पुरुष व स्त्री के कार्यगत क्षेत्रों का सवाल है तो गाँधी कार्यगत विशिष्टता में विश्वास करते थे। एक ओर पुरुष का कार्य है कि वह परिवार के रोटी का अर्जन करे। वहीं स्त्रियों का यह दायित्व है कि वह घर व बच्चों के पालन–पोषण में अपनी श्रेष्ठतम भूमिका अदा करें। गाँधी के दृष्टिकोण में स्त्रियों की भूमिका एक पालनकर्त्ता की थी तथा उनका मानना था, ''महिलाएं मुख्य रूप से घर की गृहिणी होती हैं..... वह रोटी रखने व बांटने वाली होती है.... नौनिहालों की उत्तम परवरिश महिलाओं की मुख्य व एकाधिकारपूर्ण जिम्मेदारी होती है। बिना उसके लालन–पालन के मानवता का अस्तित्व कदापि संभव नहीं है।[6] उन्होंने विवाह की महिलाओं के लिए अवश्यंभावी चीज मानने से इंकार कर दिया।

यद्यपि यह सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की सक्रिय भूमिका के प्रबल पैरोकार नहीं थे। फिर भी जब 1921 में महिला मताधिकार का मुद्दा उठा तो उन्होंने इसका पूरजोर समर्थन किया तथा इस बात को रेखांकित किया कि सत्याग्रह आंदोलन व दांडी मार्च की सफलता में महिलाओं की उत्साहपूर्ण व सक्रिय भागीदारी की निर्णायक भूमिका था। बड़े स्तर पर शराब की दुकानों तथा विदेशी वस्त्रों के विक्रेताओं के घेराव का कार्य मुख्यतः महिलाओं द्वारा ही किया गया। 1939 तक आते–आते गाँधी को इस बात का पक्का विश्वास हो गया था कि यदि राष्ट्रीय आंदोलन की धार को तीव्र कर उसे जन आन्दोलन में बदलना है तो उसमें महिलाओं की सक्रिय भागीदारी अनिवार्य है। उन्होंने कहा, ''मैं इस बात से खुश होऊंगा तथा इस बात को चाहूंगा कि भविष्य की मेरी सेवा में महिलाओं की प्राबल्यता सुनिश्चित हो। ऐसे किसी भी संघर्ष का मैं अधिक साहस व जोश से मुकाबला कर सकूंगा जिसमें पुरुषों की भूमिका

कमतर व महिलाओं की महत्तर हो। मुझे पुरुष प्रधान संघर्ष में हिंसा के तांडव की गंध आती है और मैं उससे भयभीत होता हूँ। ऐसी परिस्थितियों में महिलाएँ मेरे लिए ढाल का काम करेगी।[7] साउथर्ड के अनुसार, अहिंसक संघर्षों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी की अपनी वकालत को गाँधी घर के पालन व पोषण में महिलाओं की भूमिका को अपनी मूल अवधारणा के विपरीत नहीं मानते थे, बल्कि उसके उलट उनका ख्याल था सत्याग्रह में अपनी भागीदारी को सुनिश्चित कर महिलाएं सम्पूर्ण मानवता के पालन–पोषण की अपनी जिम्मेदारी को और अधिक सुविस्तृत व सुव्यापक करती है।[8]

गाँधी ने इस बात का बार–बार उल्लेख किया कि धर्म की मूल भावना की सुरक्षा एकमात्र महिलाएं ही कर सकती है, पुरुष या धार्मिक ब्राह्मण नहीं है। वह धर्म को जीवन–मार्ग मानते थे। उनकी नजर में धर्म व्यक्ति के वास्तविक चरित्र का सूचक था। कैथल में महिलाओं की एक सभा को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, ''समाज की बुनियाद घर के अस्तित्व पर टिकी होती है तथा 'धर्म' के विकास के श्रेष्ठतर स्थान घर होता है। घर के अन्दर से विकसित व सुवासित होकर धर्म की खुशबू सम्पूर्ण समाज को अपने आगोश में ले लिया है।[9] वह भारतीय महिलाओं के वस्त्र–चयन व वैचारिक सादगी से काफी प्रभावित थे। उन्होंने इस बात का बार–बार अपने लेखन में उल्लेख किया है कि वह मदुराई की सफेद साड़ी बंगाल की लाल किनारे वाली साड़ी तथा पंजाबी महिलाओं की सादगीपूर्ण वस्त्र विन्यास से काफी प्रभावित थे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि महिलाओं के वास्तविक आभूषण उनके उत्कृष्ट गुण हैं, उनके हुनर हैं, उनकी शुचिता है तथा उनकी सतीत्व है, सो आत्मा की पवित्रता अधिक महत्वपूर्ण है न कि बाह्य सौंदर्य जो कि क्षणभंगुर व मात्र चमड़ी की सुंदरता होती है।

आज जब सच्चे प्यार, पारिवारिक मूल्यों तथा पति व पत्नी के बीच व पत्नी वफादारी भरी सौहार्द व प्रेमपूर्ण संबंधों की बात होती है तो उससे गांधी के परिवार संबंधी विचारों की ध्वनि ही प्रतिध्वनित होती है। यह सुदृढ़ पारिवारिक मूल्यों की बेहतर व स्वस्थ समाज के निर्माण का अनिवार्य तत्व मानते थे।

गाँधी ने कहा कि देश के लिए स्वस्थ, बुद्धिमान व सुविकसित बच्चों का लालन–पालन अपने आप में स्त्रियों का उत्कृष्टतम योगदान है। उनका यह विचार था कि उत्तराधिकार संबंधी हिन्दू कानूनों में परिवर्तन व सुधार की जरूरत है। महिलाओं को भी पारिवारिक सम्पत्ति में समान हिस्सा मिलना चाहिए क्योंकि पारिवारिक सम्पत्ति में महिलाओं के अनाधिकार से ही पुरुष आधिपत्य व स्त्री–दमन का श्रीगणेश होता है। गांधी का मत था कि महिलाओं को किसी भी तरह वैधानिक अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि मुझ बेटियों व बेटों दोनों को पूर्ण समानता के भाव के साथ समान रूप से अपनाना चाहिए।[10]

1931 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन ने यह प्रस्ताव पारित किया, ''इस सम्मेलन में यह मत है कि उत्तराधिकार व सम्पत्ति से संबंधी मामलों में स्त्रियों व पुरुषों दोनों का समान अधिकार सुनिश्चित होने चाहिए।[11]

इसी तरह 'पर्दा' प्रथा नामक बुराई, जिसकी उपस्थिति अभी समाज के कुछ हिस्सों में दृष्टिगोचर होती है, की भी गांधी ने ऐतिहासिक उदाहरणों व तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में निंदा की। प्राचीन भारतीय इतिहास का संदर्भ देते हुए उन्होंने लिखा कि प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति अधिक न्यायपूर्ण तथा भागीदारी वाली थी। वे सार्वजनिक बहसों व सभाओं में खुलकर भाग लेती थी तथा निःसंकोच अपने विचारों को प्रकट करती थी। उनका जीवन अधिक पूर्ण या बंधनरहित था और उस समय पर्दे का अस्तित्व नहीं था। उन्होंने यह न्यायोचित सवाल उठाया, ''क्यों हमारी महिलाएं पुरुषों के समान अधिकारों का उपभोग नहीं करती है? क्यों वह खुले माहौल में स्वतंत्र रूप से विचरण नहीं कर सकती?'' महिला संगठनों ने भी इस मुद्दे को उठाया तथा इसके खिलाफ अपना उग्र प्रतिरोध दर्ज कराया। मृणालिनी सेन ने यहाँ तक कहा कि आधुनिक भारत की महिलाएं उस स्वतंत्रता की मांग करती है जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। गांधी ने 'पर्दा' की 'बर्बरतापूर्ण प्रथा' तथा समाज का अपूरणीय क्षति करने वाला बताकर उसे सिरे से खारिज कर दिया। 1928 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन ने कलकत्ते की अपनी बैठक में 'पर्दा' के खिलाफ कर प्रस्ताव पारित किया।

अन्य सामाजिक सुधारों की तरह गांधी भी लड़के या लड़की की सहमति के बगैर विवाह थोपने थे। वह

बाल–विवाह के भी विरोधी थे और जब बाल सुरक्षा कानून बना तो उन्होंने उसका स्वागत किया। सन् 1925 में उन्होंने कहा कि मुद्दा सिर्फ लड़कियों की विवाह आयु को 14 वर्ष करने तक ही सीमित नहीं है, वरन् इसमें बिना पूर्वानुमति वे विवाह बंधन में जकड़ने का मुद्दा भी शामिल है। विधवा पुनर्विवाह के कट्टर समर्थक के रूप में उन्होंने लिखा, ''मैंने इस बात को बार–बार कहा है कि पुनर्विवाह का जितना अधिकार न्याय से परिचालित गांधी के विचारों में विधवा पुनर्विवाह की पूरजोर रजामंदी थी। विभिन्न समुदायों को संबोधित करते हुए अपने संदेश में उन्होंने लिखा, ''यदि कोई बाल विवाह पुनर्विवाह की इच्छुक हो तो उसे जातिच्युत या बहिष्कृत नहीं करें।''[13]

गाँधी की स्वराज के सबसे महत्वपूर्ण व्याख्याओं में से एक का संबंध महिला व महिला–शक्ति से है। वेश्यावृत्ति महिलाओं की बदतरीन स्थिति का ज्वलंत उदाहरण है और गाँधी के शब्दों में 'एक समाजिक बीमारी' है जिसपर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा कि महिलाएँ यौन व आर्थिक शोषण के कारण अपने शरीर को बेचने के लिए बाध्य होती है तथा पुरूषों के कारण यह समस्या अनवरत् बनी रहेगी। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि यदि कोई इन महिलाओं की सहायता के लिए आगे नहीं आता तो इन्हें खुद परिवर्तन का वाहक बनना चाहिए तथा पुरूषों के हाथों अपने शोषण के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए। इसी प्रकार 'देवदासी' प्रथा के खिलाफ अपना रोष प्रकट करते हुए गाँधी ने कहा, यद्यपि परम्परा के सागर में गोते लगाना तो अच्छा है लेकिन उसमें डूब जाना आत्महत्या है। देवदासी प्रथा को ''नैतिक कोढ़' तथा ईश्वर की अवमानना' के रूप में चिह्नित करते हुए गाँधी उन सड़ी–गली सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाओं को तोड़ना चाह रहे थे, जिन्होंने सदियों से महिलाओं को दोयम दर्जे का नागरिक व उपभोग की वस्तु बना रखा है।

दहेज प्रथा भी इसी तरह एक अन्य सामाजिक बुराई है, जिसने भारतीय महिलाओं के जीवन को विकृत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। गाँधी इसे घृणित तथा दहेज–आधारित विवाह को 'खरीद–ब्रिकी' का कारोबार मानते थे। उन्होंने लिखा की जिन विवाहों में वधुओं व बहुओं को खरीदा जाता है वहाँ सौहार्द्रपूर्ण संबंधों की अपेक्षा कभी नहीं की जा सकती है। 1929 में गाँधी ने अपने समकालीन समाज को अचंभित करते हुए कहा कि, ''यदि मेरे पास मेरी देख–रेख में कोई लड़की हो तो मैं उसे जीवन भर कुवांरी रखना पसंद करता बजाय इसके कि उसे किसी ऐसे व्यक्ति को सौंपना जो उसे अपनी पत्नी बनाने के एवज में एक पाई पाने की अपेक्षा रखता।[14] गाँधी ने लोगों से दहेज लोभी युवाओं के बहिष्कार की अपील की। वह अन्तर्जातीय व अन्तर्सामुदायिक विवाह को इस सामाजिक बीमारी की एक कारगर औषधि मानते थे। गाँधी ने युवाओं को इस विकृत प्रथा की समाप्ति की अपील कर वस्तुतः एक बड़े व व्यापक युवा आंदोलन की नींव डाल दी। आज हम जनसंख्या विस्फोट से उत्पन्न तमाम तरह की परेशानियों से दो–चार हो रहे हैं, यद्यपि इस समस्या की पहचान 1932–33 में ही कर ली गई थी। अखिल भारतीय महिला सम्मेलन ने इस आशय का प्रस्ताव पारित किया कि म्यूनिसिपैलिटी व स्थानीय प्रशासन को जनसंख्या नियंत्रित करने के साधनों की जानकारी देने वाले केन्द्रों को व्यापक पैमाने पर खोलना चाहिए। इस प्रस्ताव के पक्ष में 99 मत पड़े जबकि विरोध में मात्र 7 वोट पड़े। यद्यपि गाँधी ने इस प्रस्ताव के प्रति प्रशंसा के भाव व्यक्त किए, लेकिन अपने इस दृढ़ मत पर कायम रहे कि आत्म–नियंत्रण इस समस्या का सर्वाधिक उपयुक्त व नैतिक समाधान है।[15]

गाँधी ने जनसंख्या के लिए गर्भ निरोधकों या कृत्रिम साधनों के उपयोग को कभी पसंद नहीं किया। उनके अनुसार, ''यद्यपि यह सत्य है कि गर्भ निरोध कई समस्या को कुछ हद तक नियंत्रित कर पाने में सक्षम है तथा इसके माध्यम से सीमित आय वाले व्यक्ति अपने–आपको आसन्न संकट से बचा सकते हैं, लेकिन इससे व्यक्ति व समाज को जो नैतिक क्षति होती है वह अपूरणीय है। इस तरह से अपनी यौन–भूख की तृप्ति की तलाश करने वाले व्यक्तियों के लिए विवाह एक माध्यम बन जाता है।[16] गाँधी इस बात में विश्वास करते थे कि महिलाएँ अधिक आत्मसंयमी होती है और उन्होंने ब्रह्मचर्य के माध्यक से संतति–निग्रह का दायित्व महिलाओं के दृढ़ कंधों को सौपा। महिलाओं की महानता की अपनी खोज के क्रम में गाँधी ने कई बार असंगत (अन्यायपूर्ण) तरीके से महिलाओं पर आवश्यकता से अधिक बोझ डाल दिया। विशेषकर परिवार नियोजन के मामले में गाँधी ने महिलाओं पर ब्रह्मचर्य के अभ्यास का अधिक जोर दिया जबकि वास्तविकता यह है कि यह मुख्य रूप से एक पुरूष समस्या है तथा ये ही इसके लिए सर्वाधिक जिम्मेदार है।

गाँधी ने लड़कों व लड़कियों के लिए समान शिक्षा का समर्थन किया। 1937 में अपने बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा स्कीम के अंतर्गत गाँधी ने 7 से 14 वर्ष तक के लडके व लड़कियों दोनों के लिए मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा का प्रस्ताव किया।[17] जहाँ तक पाठ्यक्रम का सवाल है अपने प्रारंभिक वर्षो में गांधी के विचार कुछ अलग थे, उन्होंने 1918 में लड़कियों के पाठ्यक्रम में ऐसे तत्वों को शामिल करने का प्रस्ताव किया जो उन्हें उनकी भावी भूमिका तथा मातृत्व व गृहिणी, के लिए तैयार करने में मददगार हो सकें। लेकिन 1937 तक आते–आते उन्होंने अपने विचारों में परिवर्तन करते हुए इस बात का प्रस्ताव रखा कि चौथी या पांचवीं कक्षा तक तो लड़के व लड़कियों दोनों के पाठ्यक्रम समान हों तथा छठीं कक्षा के बाद लड़कियों के पाठ्यक्रम में गृह विज्ञान को भी शामिल किया जाए। यह रोचक है कि लड़कियों के उच्च शिक्षा के उद्देश्य को ध्यान में रखकर अखिल भारतीय महिला सम्मेलन के प्रयासों से सन् 1932 में लेडी इर्विन साइंस कॉलेज की स्थापना हुई। गाँधी ने महिलाओं को शिक्षक के रूप में प्राथमिकता प्रदान की और 1931 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन में इस आशय का प्रस्ताव पास किया कि जहाँ तक संभव हो प्रारंभिक अवस्था में लड़के व लड़कियों दोनों के लिए महिला शिक्षकों की नियुक्ति को प्राथमिकता प्रदान की जाए। वास्तव में उन्होंने जोर डाला कि प्रारंभिक अवस्थाओं में पूर्ण रूप से महिलाओं की ही जिम्मेदारी सौंपी जाए।

गाँधी को इस बात का पूरा यकीन था कि आर्थिक आजादी महिला सशक्तिकरण में अहम् भूमिका अदा कर सकती है। वह महिलाओं को चरखा कताई बुनाई के लिए निरंतर प्रोत्साहित व प्रेरित करते रहते थे। 1919 में नाडियाड में महिलाओं को संबोधित करते हुए उन्होंने जोर देते हुए कहा, ''आपके पास 2 या 3 घंटे ऐसे होते हैं जब आपके पास करने के लिए कुछ नहीं होता है। आप उसे मंदिरों में पूजा–अर्चना में बितात हैं। मंदिरों पर मालाजाप 'धर्म' है परंतु वर्तमान समय में भक्ति का असली मर्म कपड़े के इस कार्य में निहित है..... धनी परिवार की स्त्रियों को प्रतिदिन कम–से–कम 2 से 3 घंटे चरखा कताई व बुनाई का काम करना चाहिए तथा उसे भंडारगृहों में जमा करा देना चाहिए या उसे उपहार देना चाहिए..... जो भी पैसे को ध्यान में रखकर कताई कार्य करेगा उसे प्रति पाउण्ड (सूत) 3 आना मिलेगा और पैसे की एक–एक पाई उपयोगी और हितकारी है। अपने द्वारा अर्जित पैसों से आप अपनी जरूरत की सामग्री खरीद सकती है, जितना अधिक आप कताई करेंगी उतनी ही अधिक आपकी कमाई होगी। कमाई का यह श्रेष्ठ जारिया है।[18]

वास्तव में गाँधी ने यह महसूस किया कि स्वदेशी आंदोलन की सफलता तभी संभव है जब महिलाएँ व्यापक स्तर पर तथा बड़े पैमाने पर कताई व बुनाई का काम अपने हाथों में लेंगी। गाँधी इसके लिए महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त व स्वतंत्र करने का प्रयास कर रहे थे। उन्होंने 'यंग इंडिया' में लिखा कि चरखा–कताई जहाँ माध्यम वर्ग की आय में बढ़ोत्तरी कर सकती है वहीं यह निम्नवर्गीय परिवारों की आय का बड़ा हिस्सा या कभी–कभी एकमात्र हिस्सा भी बन सकती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि गाँधी ने एक ओर महिलाओं को सामाजिक व सांस्कृतिक शोषण का शिकार पाया और वहीं दूसरी ओर उसे निचले स्तर से सामाजिक परिवर्तन का निर्णायक वाहक व उत्प्रेरक भी माना। यह चीज तब मुखर होकर हमारे सामने आती है जब वह महिलाओं को माँ, पत्नियों, शिक्षिकाओं तथा कार्यकर्त्ताओं के रूप शराब की दुकानों का घेराव करते हुए तथा विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना देते हुए देखते हैं। वह परिवार व समाज में महिलाओं को प्रभावी सामाजिक भूमिका के प्रबल पैरोकार थे। वह उनमें समाज व राष्ट्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की महती जिम्मेदारी निहित करना चाहते थे और इसके लिए उन्होंने महिलाओं को हस्तनिर्मित सूत–उत्पादक के रूप में, जो कि विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का सर्वाधिक निर्णायक हथियार था, स्वदेशी आंदोलन के केन्द्र में स्थापित किया। स्वदेशी व असहयोग के उनके कार्यक्रम महिलाओं की पारंपरिक भूमिकाओं व विचारों से प्रेरित थे। ऐतिहासिक रूप से कहा जाए तो महिलाएँ घरेलू उपयोग हेतु प्रयुक्त वस्त्रों की कताई व बुनाई के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी रही है तथा वह यह एक वैश्विक प्रवृत्ति रही है। इस तरह से सख्त व आधिपत्य वाले इस संसार में उनका संघर्ष मौन और अहिंसक रहा है। आश्चर्यजनक रूप से गाँधी ने माहिलाओं की इन दो अभिन्न गुणों

की पहचानकर उसे पारिवारिक गतिविधियों से राष्ट्रीय गतिविधियों में समाहित, संपूरित व एकीकृत कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप एक जनआधारित ठोस राष्ट्रवादी संघर्ष की नींव पुख्ता व परिणामोत्पादक हुई। महिलाओं की दृढ़ता व साहस के आगे ब्रिटिश सामाज्य को भी नतमस्तक होना पड़ा। यह अपने–आप में एक बहुत बड़ी सफलता थी और इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने प्रायः उपेक्षित व नजरअंदाज कर दिए गए तथाकथित 'महिला कार्य व श्रम' की महत्ता को स्थापित किया तथा उसे भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की सफलता का पर्याय बनाया।

संदर्भ सूची

1. साउथर्ड बारबरा, *''फेमिनिज्म ऑफ महात्मा गाँधी'',* गाँधी मार्ग, वॉ. 13, नं. 71, अक्टूबर 1981, पृ. 403।
2. ''वूमेन इन स्मृतिज'', *हरिजन,* 28 नवम्बर, 1936।
3. ''दि हिन्दू वाइफ'', *यंग इंडिया,* 3 अक्टूबर, 1929।
4. ''हाट इन वूमेन्स रोल'', *हरिजन,* 24 फरवरी, 1940।
5. *यंग इंडिया,* 9 दिसम्बर, 1927।
6. *हरिजन,* 24 फरवरी, 1940।
7. ''स्वराज थ्रू वूमेन'', *हरिजन,* 2 दिसम्बर 1939।
8. बरबरास साउथर्ड, पृ. 485।
9. *नवजीवन,* 8 मई 1921, सी. डब्ल्यू, एम. जी. वॉ 20 पृ. 63।
10. ''पोजिशन ऑफ वूमेन'', *यंग इंडिया,* 14 अक्टूबर, 1929।
11. रिपोर्ट ऑफ दी आल इंडिया वूमेन्स कांफ्रेंस, सातवां अधिवेशन, पृ. 134।
12. ''हैल्पेस विडोज'', *हरिजन,* 22 अगस्त 1935।
13. *गुजरात नवजीवन,* 12 अक्टूबर 1919।
14. *यंग इंडिया,* फरवरी, 14 1929।
15. ''बर्थ कंट्रोल–1'', *हरिजन,* 14 मार्च 1936।
16. ''बर्थ कंट्रोल–2'', *हरिजन,* 14 मार्च 1936।
17. पटेल एम. एस., *''दी एजूकेशनल फिलोस्फी ऑफ महात्मा गाँधी'',* नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1953, पृ. 109।
18. जोशी पुष्पा, *''गाँधी ऑन वूमेन'',* नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1988, पृ. 30–31।

****